International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

तुलसीदास के काव्य में सामाजिक समरसता के संदर्भ में नारी की भूमिका

Mr. Kamal Dev

Research Scholar, Hindi, Career Point University, Hamirpur

शोध सारांश - गोस्वामी तुलसीदास जी का आविर्भाव ऐसे समय में हुआ जब भारतीय समाज अपनी परिभाषा से आत्म विस्मृत हो रहा था अर्थात अपने सामाजिक तत्वों व मूल्यों को खोता जा रहा था | उस समय गोस्वामी जी ने एक प्रकाश के समान उस सामाजिक अंधेरे को समाप्त करने का दृढ़ संकल्प किया क्योंकि संवेदनशील रचनाकार पर युग व देशकाल का प्रभाव अनिवार्य रूप से पडता है। रचनाकार जिस परिवेश में रहता है, उसी से संस्कार और प्रेरणा ग्रहण करता है। गोस्वामी जी ने भी अपने साहित्य में युगीन संस्कार लिए, जिस कारण वह उच्चकोटी के समरसतावादी कवि बने क्योंकि साहित्य ही समाज का दर्पण होता है। साहित्य ही मनुष्य को संकीर्णता से ऊपर उठाता है। मानवीय मूल्यों पर बल देना, ऊँच-नीच व रंगभेद और देशकाल की सीमाएँ उसे नहीं बाँधती। यही भावना समरसता के भाव को जागृत करती है जोकि गोस्वामी के सम्पूर्ण साहित्य में झलकती है। उन्होंने 'रामचरितमानस' में न केवल सामाजिक समरसता स्थापित करने की पहल की बल्कि धर्म, राजनीति, साहित्य इत्यादि क्षेत्रों में भी समरसता स्थापित करने की भी पहल की है। तुलसी जी ने जीवन और जगत के सभी क्षेत्रों में समरसता स्थापित करने का अतुलनीय प्रयास किया है। जिस कारण तुलसी जी के साहित्य में सामाजिक समरसता एवं समन्वयता दिखाई पडती है। इन्होंने दवैत - अद्वैत, सगुण - निर्गुण, शैव- वैष्णव, शाक्त, गरीब- अमीर, ऊँच-नीच और जातिवाद के संकीर्ण विचारों से ऊपर उठकर इन सब में समरसता व समन्वय स्थापित किया है और एक आदर्श समाज की नींव रखने का प्रयास किया है। इस आदर्श समाज के लिए नारी की भूमिका अतुलनीय एवम् आदर्शवादी रही है | इसलिए तुलसी एक उच्चकोटी के कवि, महान लोकनायक, सफल समाज सुधारक तथा भारतीय संस्कृति के श्रेष्ठ प्रचारक रहे है।

मुख्य शब्द :- तुलसीदास, समरसता, रंगभेद, जातिवाद, समाज

शोध प्रस्तावना

गोस्वामी तुलसीदास जी का आविर्भाव ऐसे काल खण्ड में हुआ जब भारतीय समाज में मुस्लिम (इस्लामिक) संस्कृति का वर्चस्व स्थापित हो रहा था तो इसी कालखण्ड में गोस्वामी जी ने ऐसे ग्रंथ की रचना कर डाली जोकि भारतीय संस्कृति व सामाजिक संस्कारों के पुनर्जागरण में एक महत्वपूर्ण दस्तावेज सिद्ध हुई। वह है उनकी कालजयी रचना 'रामचरितमानस' क्योंकि इस समय शासक और समाज का उच्च वर्ग विलासिता में डूबा हुआ था तथा मध्यम और निम्न वर्ग की स्थिति अत्यंत दयनीय थी| इस सबंध में डा. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है-" *उस समय उन्होंने जिस समाज को देखा था, वह बहुत ऊंचे आदर्शों पर नहीं चल रहा था। उच्च स्तर में लोग विलासिता*

के पंक में डूबे थे और निचले स्तर के स्त्री- पुरुष दरिद्र, रोगी और अशिक्षित थे।" इसी वर्णित समाज के प्रति गोस्वामी जी ने समरसतावादी दृष्टिकोण के माध्यम से अपने सम्पूर्ण काव्य में '**सर्वजन् हिताय सर्वजन सुखाय**' की भावना को प्रबलता से पाठकों के समक्ष रखा और बिना किसी भेदभाव के समाज के सभी वर्गों के अधिकारों की बात करके उनके उत्थान का समरस भाव अपनाया और एक आदर्श समाज की नींव रखने का प्रयास कर एक बार पुनः राम राज्य की कल्पना की है। राम राज्य की कल्पना तभी साकार हो सकती थी जब भारतीय समाज में सामाजिक समरसता के भाव को उद्यमान कर हर वर्ग, जाति, समुदाय व संप्रदाय में समन्वय हो सके। इसी का प्रयास गोस्वामी जी के सम्पूर्ण साहित्य में देखने को मिलता है। इस कथन की पुष्टि स्वयं गोस्वामी जी करते हैं :-

" नहि दरिद्र कोउ दुःखी न दीना
नहि कोउ अवधु न लच्छन हीना
सब निदर्भ धर्मरत पुनी
नर अरु नारि चतुर सब गुनी"

गोस्वामी जी ने इन पंक्तियों के माध्यम से उस समय के भारतीय समाज से यह आवाह्न किया है कि हम पुनः सामाजिक समरसता के भाव को जागृत कर पुनः उस राम राज्य की कल्पना कर सकते या यों कहे कि एक बार पुनः **राम राज्य स्थापित करें जिसमें कोई व्यक्ति गरीबी या दुख से पीडित नहीं हो, सभी लोग ज्ञानी हो और सभी लोग ज्ञानी और शुभ लक्षणों से युक्त हो, सभी लोग निर्भय हो.... सभी लोग गुणवान हो।** इस कथन से एक बात स्पष्ट हो जाती है कि तुलसीदास जी समाज के हर वर्ग का उत्थान एकरसता के साथ करना चाहते थे। वे एकरूपता के ध्येय को, संमभावी भाव के साथ सामाजिक समरसता के भाव को चित्रार्थ करना चाहते थे। यह तभी संभव हो सकता है जब हम नारी (स्त्री) की अहम् भूमिका को समझ सके ताकि उस समय का समाज एक राम राज्य के समाज जैसा उच्च आदर्शों बाला बन सके। इसी आदर्श को स्थापित करने हेतु उस विकृत कालखण्ड में भी तुलसीदास जी ने 'रामचरितमानस' जैसी अमूल्य कृति भारतीय समाज को प्रदान की है।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने न केवल व्यक्ति समाज की समरसता की बात अपने काव्य में की है बल्कि उन्होंने व्यक्ति समाज के साथ-साथ प्राकृतिक वस्तुओं में भी समरसता के बीज बोने का कार्य किया है। उनका मानना था कि मानव समाज पर प्राकृति के जैविक समाज का प्रभाव पडता है अतः इन दोनों में समन्वयता होना अति आवश्यक है। उनका मानना था:-

"अगम पंथ बन भूमि पहारा| करि के हरि सर सरित अपारा|
कोल किरात कुरंग विहंगा। मोहि सब सुखद प्रानपति सांग।"

इन पंक्तियों के माध्यम से गोस्वामी जी कहते है कि यहां के दुर्गम रास्ते, जंगली, धरती, पहाड, हाथी, सिंह, अथवा तालाब एवं नदियाँ, कोल, भील , हिरन और पक्षी ये सब साथ रहते, सभी मुझे सुख देने वाले होंगे। यहां तो प्राकृतिक सम्पदा को भी मनुष्य का सहयोगी बताया गया है यानि उनमें भी सामाजिकता के वे सभी गुण अथवा तत्व विद्यमान है जोकि एक आदर्श एवं कल्याणकारी समाज के लिए अति आवश्यक है | जिस कल्याणकारी व राम राज्य की कल्पना तुलसीदास जी करते है वह सामाजिक समरसता व समन्वयता के बिना अधूरा है यानि यों कहें तो कोई अतिशोयोक्ति नहीं होगी कि सामाजिक समरसता के बिना हम राम राज्य की कल्पना भी नहीं कर सकते है । तुलसीदास ने कहा है कि

" मेरे जाति-पाँति न-चहो काहु की जाति - पाँति
मेरे कोऊ काम को न हऔ काहू के काम को
लोकु परलोकु रघुनाथ ही के हाथ सब
भारी है भरोसो तुलसी के एक नाम को "

रामचरितमानस' के अयोध्याकाण्ड के दोहा न. 15 में भी तुलसीदास जी कहते है - **"तुम्ह समान रघुवीर सहाई अतर पुनीत प्रभु निषाद घर आयी"** अर्थात एक क्षत्रिय कुल के राजकुमार का एक निषाद या निम्नजाति के घर पर पधारना सामाजिक समरसता का उत्तम व श्रेष्ठ उदाहरण है। इसके साथ शबरी के प्रसंग से भी यह बात स्पष्ट हो जाती है कि तुलसी जी ने राम को अपने काव्य का मुख्य पात्र बनाकर सामाजिक समरसता के उच्च आदर्शों को स्थापित किया है क्योंकि प्रभु राम जो स्वयं ईश्वर का अवतार था को उच्च और निम्न के भेद को मिटाने वाला बताया गया है अर्थात निम्न वर्ग के उथान व उनका उधार करने बाला सिद्ध किया है जो समाज के संमभावी भाव व एकरूपता के लिए आवश्यक है। इससे एक बाद बात तो स्पष्ट हो जाती है कि गोस्वामी जी एक उच्चकोटी के समरसतावादी कवि है। उन्होंने '**रामरचितमानस**' में न केवल सामाजिक समरसता स्थापित करने की पहल की बल्कि धर्म, राजनीति, साहित्य इत्यादि क्षेत्रों में भी समरसता स्थापित करने की पहल की है।

गोस्वामी जी के समय में अकबर की नीतियों का खंडन करने का सामर्थ्य किसी में नहीं था। अपने समकालीन राजनैतिक परिवेश में गोस्वामी जी ने अनुभव किया कि भारतीय नरेश विगत स्वाभिमान होकर विष्य-वासनाओं में लिप्त आत्मवेचना के शिकार रहे थे। मुगल शासक अपनी विवेकहीना और कठोर दंड नीति से प्रजावर्ग को आतंकित करके उनका मनमाना शोषण करते थे। धन, धरती और नारी का बलात अपहरण उनका सामान्य आचरण बन गया था जिस कारण समाज में समरसता की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। नीति, धर्म आदर्श, त्याग, बलिदान ,सेवा, न्याय निष्ठा जैसे उदात भाव विलुप्त हो गये थे । इन्ही उदात भावों की जाग्रति से ही एक आदर्श समाज की कल्पना की जा सकती थी | इन उदात भावों के सृजन हेतु (जागृत करने) तुलसीदास जी ने इनको सामाजिक समरसता के अंतर्गत ही रखा और आदर्शवादी राम राज्य की कल्पना की। यही वह राम राज्य है जो इन भावों को जागृत करने में उपयुक्त वातावरण प्रदान कर सकता था। लेकिन उस समय भारतीय समाज आत्मसुख और स्वार्थ पर केन्द्रित दानवी वृति व मुक्त विकास की ही भावना से ओतप्रोत था| जो रावण राज्य की अवधारणा को सिद्ध करती थी | इसी के प्रतिरोध के लिए राम राज्य की आवश्यकता थी क्योंकि राम राज्य वस्तुतः लोकाराधव और लोक मंगल का सुपुष्ट आधार था। इसी राम राज्य से ही वर्तमान समाज में सामाजिक समरसता के भाव को जन-जन में जागृत कर सकते है। गोस्वामी स्वयं लिखते है:-

"रामराज बैठे त्रय लोका। हरषित भये गये सब शोका ॥
वयरू न कर काछु सज कोई। राम प्रताप विषमता खोई ॥"

इन पंक्तियों में सबका कल्याण व सुख समृद्धि की कल्पना गोस्वामी जी ने की है जहाँ सब नागरिक सुख समृद्ध होगे वहाँ सामाजिक समरसता अपने उतकर्ष पर होगी ।

गोस्वामी जी मानते है कि सामाजिक विषमता के कारण ही बैर-भाव की सृष्टि होती है। इस विषमता के लिए स्वार्थ एक कार्णीभूत तत्व है जिससे ईर्ष्या-द्वेष जैसी कुवृतियों की सृष्टि होती है। विषमता और बैर भाव के रहते समतामूलक आदर्श समाज का संगठन असम्भव है। इसके लिए ऐसे शासक या नेता की आवश्यकता होती है जो

अपने प्रताप से विषमता का निर्मूलन और समता का प्रतिष्ठापन कर सके | राम ने अपने प्रताप से यही किया है। उन्होंने भौतिक सुख सुविधा प्रदान करने के साथ नैतिक और आध्यात्मिक शक्तियों का भी उपयोग किया । प्रजा उनके उदात चरित्र के प्रति प्रलुब्ध और अनुकरण के लिए कृत संकल्प थी । शासक अथवा नेता का यही वह प्रताप है जिससे विषमता का उन्मूलन सम्भव होता है। आदर्श समाज की रचना के लिए शासक और प्रजा के बीच इसी प्रकार के सम्बंध की आवश्यकता होती है। यही वह सम्बन्ध है जो तुलसीदास के सामाजिक समरसता के दृष्टिकोण को प्रतिपादित करता है। गोस्वामी कहते है :-

"सब नर करहिं परस्पर प्रीति। चलहिं स्व धरम निरत श्रुति रीति"

उनका मानना था कि नागरिकों में इस प्रकार की कर्तव्य भावना का उदय किसी भी समाज का गौरव है। सामाजिक समरसता के लिए स्त्री पुरुष में समान अधिकार व उत्थान की बात होना अति आवश्यक है| तुलसी जी का नारी के प्रति दृष्टिकोण भी समरसतावादी रहा है। इन्होंने पुरुष प्रधान समाज की बात नहीं की है इनका मानना था कि पुरुष और स्त्री समाज के दो मुख्य आधार अथवा पहिए है। इसलिए दोनों का एक साथ समान अधिकारों के चलते समाज को आदर्श समाज बनाने में अपनी अपनी भूमिका निभानी चाहिए |

गोस्वामी जी ने सीता जी को राम जी से भी उच्च स्थान प्रदान किया है तथा समाज के विकास मेंनारी के अतुलनीय योगदान को बताने का प्रयास किया है अर्थात समाज की कल्पना हम तभी कर सकते है जब समाज के दोनों मुख्य तत्व स्त्री और पुरुष में समरसता रहती है, समान अधिकार रहते है तथा उच्च आदर्श रहते है | तुलसीदास स्वयं कहते है :-

"सीयराम मय संग जगजानी। करहु प्रणाम जोरि जुग पानी। "

इस मान्यता के अनुसार ईश्वर अंश जीव स्वयमेव सेव्य और सामन्य बन जाता है। सामाजिकशील , सौजन्य ,सौहार्द और शांति के लिए एक प्रभावी महामंत्र है। सामाजिक संस्कति के कारण ही गोस्वामी जी ने जनकी मंगल , पार्वती मंगल जैसी कृतियों को लिखकर सामाजिक संस्कारों और अनुष्ठानों के लिए मांगलिक गीत लिखे है। जोकि सामाजिक समरसता के भाव को स्पष्ट करती है तथा समाज में स्त्री पुरुष के बीच अन्तर को समाप्त करने की पैरवी करता है| आजकल कुछ समाज-सुधारकों और पाश्चात्य-शिक्षा के प्रभाव से जगमगाती हुई युवतियों ने यह आन्दोलन शुरू किया है कि तुलसीदास नारी जाति को बड़ी घृणा की दृष्टि से देखते थे और प्रमाण में उन्होंने उनकी एक चौपाई को विशेष रूप से जनता के सामने रखा है। वह चौपाई यह है :

ढोल गंवार सूद्र पसु नारी। सफल ताड़ना के अधिकारी ।

देवियाँ इसे अपमान समझती है और बदले में वे तुलसीदास को भी खोटी-खरी सुना बैठती हैं। इसका एक यह दुष्परिणाम तो उन्हें हाथों-हाथ मिल गया कि वे तुलसीदास से मिलने वाले अन्य लाभों से वंचित हो गई। दूसरे कुछ अंशों में उनके अविवेक का भी दिग्दर्शन हो गया। यह अविवेक कवि के साथ न्याय करने में हुआ है। कवि को तो नाना रूप धारण करने पड़ते हैं। वह रावण के मुख में बैठकर राम को भी गालियाँ देता है और राम के मुख में बैठकर सज्जनों और दुष्टों के लक्षण भी गिनाता है। वह सूर्पणखा के मुख से बोलता है और अनुसूया के भी। वही लक्ष्मण भी बन जाता है, और परशुराम भी। इन कामों में कवि का अपना भाग इतना ही होता है कि वह एक प्राञ्जल भाषा में, बक्ता के कथन को अच्छी तरह व्यक्त कर देता है। यहाँ यह तर्क किया जा सकता है कि कवि जो कहलाना चाहता है, वही कहलाता है, और जो उसके सिद्धान्त के विरुद्ध होता है, उसे छोड़ देता है। यह सच है; पर

ऐसा तर्क उपस्थित होने पर प्रसंग देखना चाहिए कि कौन सी बात किस अवसर पर कही गई है और वह कहाँ तक वहाँ स्वाभाविक है। इसका यह मतलब नहीं है कि गोस्वामी का नारी के प्रति दृष्टिकोण गलत अवधारणा से ग्रसित है बल्कि नारी के प्रति उनका दृष्टिकोण आदर्शवादी रहा है | उन्होंने नारी को एक शक्ति के रूप ने धर्म की स्थापना करने बाली बताया है| एस संदर्भ में रामनरेश त्रिपाठी की कहते है कि "मैंने तुलसीदास के करीब-करीब सभी ग्रन्थों का अच्छी तरह अध्ययन किया है। मुझे तो वे स्त्री-जाति के विरोधी नहीं जान पड़े। उन्होंने उन्हीं को श्रेष्ठ कहा है जो **'जननी सम जाहि सब नारी।'** यह उस समय की प्रचंड कामाग्नि को बुझाने या शान्त करने के लिए ही कहा गया है।

तुलसीदास तो यहाँ तक सावधान रहते थे कि सीता के श्रृंगार के वर्णन में लिखा कि **'सोह नवल तन सुन्दर सारी ।'** तत्काल उनको ऐसा लगा कि कहीं इससे पाठक या श्रोता के मन में काम-वासना न जागृत हो, इससे फौरन कहा- **'जगत जननि अतुलित छवि भारी।'** एक 'जननि' शब्द ने प्रेम को सात्विक बना दिया। हमें कृतज्ञ होना चाहिए कि तुलसीदास ने हमें उस आग से बचा लिया जो हमारे चिर- संचित सद्गुणों को जला डालती ।

शोध उपसंहार- तुलसीदास जी ने जीवन और जगत के सभी सभी क्षेत्र में समरसता स्थापित करने का अतुलनीय प्रयास किया और अपने विचारों द्वारा तत्कालीन समाज में व्याप्त विषमता ,द्वेष, वैमनस्य, कटुता आदि को दूर करके पारस्परिक स्नेह, प्रेम , सौहार्द, समता, सहानुभूति आदि का प्रचार किया इसलिए तुलसीदास जी एक उच्च कोटी के कवि, महान लोकनायक, सफल समाज सुधारक, भारतीय संस्कृति के

श्रेष्ठ प्रचारक एवं समाज के उन्नत आदर्श के संस्थापक कहलाते है। तुलसीदास भारतीय साहित्य के एक प्रमुख व्यक्तित्व रहे है, उन्होंने प्रचलित मुस्लिम शासन और भारतीय हिन्दु परम्पराओं के बीच महत्वपूर्ण सांस्कृतिक और धार्मिक विसंगति के 'समय रामचरितमानस' जैसी कालजयी रचना की रचना कर तात्कालिक भारतीय समाज को एकरूपता में बांध कर सामाजिक समरसता के उच्च विचार को सिद्ध किया है। वर्तमान में भी तुलसीदास जी और समाज को अपने विचारों व साहित्य से प्रकाशित कर रहे है व समाज में उनका स्थान अद्वितीय है।

शोध-अंतर

समीक्षित साहित्य के आधार पर निम्न प्रमुख शोध अंतर (रिसर्च गैप) सामने आते है-

1. सामाजिक समरसता में नारी की अहम भूमिका का वर्णन अपेक्षाकृत कम हुआ है।
2. सभी शोधकर्ताओं का ध्यान सामाजिक जाति व सामुदायिक भेद पर ही रहा, नारी वर्णन उनसे अछूता रहा | इस पर शोध कार्य होने चाहिए थे |
3. हर कालखण्ड में नारी की भूमिका अहम रही है लेकिन शोधार्थी का ध्यान उस तरफ नहीं गया|
4. नारी के प्रति तुलसीदास जी का दृष्टिकोण समरसतावादी रहा है लेकिन इस पर बहुत कम शोध कार्य हुआ है |
5. तुलसीदास ने नारी को शाक्ति का रूप माना है लेकिन साहित्य में उपलब्ध शोधकर्ता उस शक्ति के प्रभाव से वंचित रहे हैं।
6. राम राज्य की कल्पना में नारी का श्रेष्ठ योगदान रहेगा यह विचार तुलसीदास ने किया है लेकिन शोधकर्ता की दृष्टि इस तरफ नहीं पड़ीं। इस पर शोध बहुत कम या न के बराबर है|
7. नारी के बिना समाज की कल्पना भी नहीं कर सकते यह सब जानते हुए भी शोध कार्यों में नारी वर्णन आभाव है।

8. ये शोध-अंतर आपके अध्ययन को एक स्पष्ट दिशा प्रदान करते है और इस शोध की मौलिकता को प्रमाणित करते है।

साहित्य समीक्षा

तुलसीदास के काव्य में सामाजिक समरसता के संदर्भ में नारी की भूमिका से सम्बंधित बहुत कम बोध लिखे गये या प्रकाशित हुए है। मुख्यत सभी शोधकर्ताओं का ध्यान सामाजिक समरसता के परिपेक्ष्य में सामाजिक भेद- भाव जैसे ऊँच-नीच, जाति-पाति तक ही रहा । सामाजिक समरसता का सही अर्थों में अगर व्याख्य करे तो समाज के प्रत्येक वर्ग को समाधिकार, सुविधा व सबके साथ मिलजुल कर रहने का भाव रहता है। इसी वर्ग में नारी भी आती है। नारी जाति की इस संदर्भ में हम उपेश नहीं कर सकते है। तुलसीदास ने अपने काव्य में नारी के उच्च आदर्शो को स्थापित किया है। उसे पुरुष से भी शिक्षित व आदर्शवादी माना है। नारी के सम्मान में ही तुलसीदास ने पार्वती मंगल, जानकी मंगल जैसी रचनाओं का लेखन किया है।फिर भी समकालीन शोधकर्ता इस महत्वपूर्ण विषय पर अपना ध्यान आकृष्ट नहीं कर पायें है। नारी का योगदान हर काल में , प्रत्येक समाज में अतुलनीय रहा है। इनके योगदान को नकारा नहीं जा सकता हैं| सामाजिक समरसता की कल्पना को अगर साकार करना है तो नारी को समाज की मुख्यधारा में लाना होगा | उनकी पहचान व हस्ती उन्हें दिलवानी होगी जो तुलसीदास ने करवाई थी। सीता जी स्त्रीत्व की पराकाष्ठा है | इनका नारी के प्रति दृष्टिकोण गहराई से धार्मिक है और इनका स्त्री विमर्श आदर्शवादिता से युक्त है|

सन्दर्भ ग्रंथ

1. 1.हिन्दी साहित्य - उद्भव एवं विकास,
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास , शुक्ल आचार्य रामचन्द्र
3. हिन्दी साहित्य की भूमिका, द्विवेदी हजारीप्रसाद
4. गोस्वामी तुखसीदास, शुक्ल आचार्य रामचन्द्र
5. तुलसीदास और उनका काव्य , त्रिपाठी रामनरेश
6. लोकवादी तुलसीदास , त्रिपाठी विश्वनाथ
7. गोस्वामी तुलसीदास , तिवारी रामजी
8. रामचरितमानस(अयोध्याकांड), गोस्वामी तुलसीदास
9. तुलसी की साहित्य साधना , राय डॉ. लल्लन
10. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास ,सिंह बच्चन